प्रकाशन तिथि : 26 जून 2015, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 33, अंक 12, कुल पृष्ठ 36

वीतराग-विज्ञान

(पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र)

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री चमत्कारजी, सवाईमाधोपुर (राज.)

वीतराग-विज्ञान (384)

हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

सम्पादक :

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

सह-सम्पादक :

डॉ. संजीवकुमार गोधा

प्रकाशक एवं मुद्रक :

ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पर्क-सूत्र :

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

फोन :(0141)2705581, 2707458

फैक्स : 2704127

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

शुल्क :

आजीवन	:	251 रुपये
वार्षिक	:	25 रुपये
एक प्रति	:	2 रुपये

मुद्रण संख्या :

हिन्दी	:	7200
मराठी	:	2000
कन्नड़	:	1000
कुल	:	10200

भव से छुटकारे की अपूर्व बात

अहा ! चैतन्यप्रभु समीप ही विराज रहा है, उस पर दृष्टि नहीं है और पर्याय पर दृष्टि रखने से चैतन्यप्रभु प्रगट नहीं होगा। भले ही पर्याय में ज्ञातृत्व का विशेष विकास हुआ है और व्यवहार श्रद्धा आदि पर्याय में हुए हैं, परन्तु उस पर्याय के ऊपर दृष्टि रखने से चैतन्यप्रभु के दर्शन नहीं होंगे। यह तो पर्याय की दृष्टि से मर जाये तब दृष्टि हो ऐसी बात है ! ज्ञान की पर्याय में शास्त्रज्ञान का विकास हुआ है, उसका भी लक्ष्य छोड़ दे ! वह ज्ञान आत्मा का ज्ञान नहीं है। परसत्तावलम्बी ज्ञान में जिसे उत्साह आता है वह ज्ञेयनिमग्न है, उसे ज्ञानस्वरूप में लीनता नहीं होगी। जिन्हें योग्यता का अभिमान है वह सब ज्ञेयनिमग्न हैं, ज्ञाननिमग्न नहीं हैं। यह तो भव से छुटकारे की अपूर्व बातें हैं। प्रभु ! ज्ञायकभाव में दृष्टि को स्थिर करो ! द्रव्य में अनन्त सामर्थ्य भरा है वहाँ दृष्टि को लगाओ ! निगोद से लेकर केवलज्ञान और सिद्धदशा तक की कोई पर्याय शुद्धदृष्टि का विषय नहीं है, शुद्धदृष्टि का विषय तो अखण्ड द्रव्यसामान्य है, वहाँ अपनी दृष्टि को लगाकर स्थिर कर ! दृष्टि को द्रव्य में ही स्थिर कर देने पर आगे बढ़ा जाता है। 234

- द्रव्यदृष्टि जिनेश्वर, पृष्ठ 54

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 33 (वीर नि. संवत् - 2541) 384 अंक : 12

जगत में सो देवन...

जगत में सो देवन को देव।।टेक।।
जासु चरन परसै इन्द्रादिक, होय मुकति स्वयमेव।।
जगत में सो देवन... ।।1।।
जो न छुधित, न तृषित न भयाकुल, इन्द्री विषय न बेव।
जनम न होय, जरा नहिं व्यापै, मिटी मरन की टेव।।
जगत में सो देवन... ।।2।।
जाकै नहिं विषाद, नहिं विस्मय, नहिं आठों अहमेव।
राग विरोध मोह नहिं जाके, नहिं निद्रा परसेव।।
जगत में सो देवन... ।।3।।
नहिं तन रोग, न श्रम, नहिं चिंता, दोष अठारह भेव।
मिटे सहज जाके ता प्रभु की, करत 'बनारसि' सेव।।
जगत में सो देवन... ।।4।।

- कविवर पण्डित बनारसीदासजी

सम्पादकीय

तत्त्वार्थमणिप्रदीप
(आचार्य उमास्वामी कृत तत्त्वार्थसूत्र की टीका)

(गतांक से आगे....)

आयुकर्म के आस्रव के कारण

मोहनीय कर्म के आस्रव के कारणों के उपरान्त अब आयुकर्म के आस्रवों का वर्णन करते हैं; जो इसप्रकार है –

बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ।।१५।।

माया तैर्यग्योनस्य ।।१६।।

अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ।।१७।।

स्वभावमार्दवं च ।।१८।।

निःशीलतव्रतत्वं च सर्वेषाम् ।।१९।।

सरागसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ।।२०।।

सम्यक्त्वं च ।।२१।।

बहुत आरंभ करने और बहुत परिग्रह रखने से नरकायु का आस्रव होता है।

मायाचार से तिर्यंचायु का आस्रव होता है।

अल्प आरंभ करने और अल्प परिग्रह-संग्रह से मनुष्य आयु का आस्रव होता है।

स्वभाव की कोमलता भी मनुष्य आयु के आस्रव का कारण है।

थोड़े आरंभ और थोड़े परिग्रह के साथ पंचाणुव्रत एवं सप्तशीलरूप व्रतों का पालन नहीं करनेवालों को सभी आयुओं का आस्रव होता है।

भोगभूमियाँ जीवों के व्रत और शील नहीं हैं, फिर भी उन्हें देवायु का आस्रव होता है।

सरागसंयम, संयमासंयम, अकामनिर्जरा और बालतप भी देवायु के आस्रव के कारण हैं।

सम्यक्त्व को भी देवायु के आस्रव का कारण कहा है।

ध्यान रहे, सम्यग्दृष्टि जीव मरकर भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी नहीं होते। तात्पर्य यह है कि वे नियम से वैमानिकदेव ही होते हैं।

भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषीदेवों के सम्यग्दर्शन हो सकता है, पर **उक्त पर्यायों में कोई जीव सम्यग्दर्शन सहित पैदा नहीं होते।**

यदि सम्यग्दृष्टि मनुष्य या तिर्यंच हैं तो वे वैमानिक देव होंगे; देवियाँ नहीं। यदि देव या नारकी हैं तो वे मनुष्य और मनुष्यों में भी पुरुष ही होंगे।

यद्यपि सम्यग्दर्शन आस्रव का कारण नहीं होता; तथापि **सम्यक्त्वी वैमानिक देवों में ही जन्म लेते हैं; इसकारण यहाँ उसे भी देवायु के आस्रव के कारणों में गिनाया है।**

सराग संयम – रागपूर्वक संयम पालने को सराग संयम कहते हैं।

संयमासंयम – त्रसहिंसा के त्यागरूप संयम और स्थावर हिंसा का त्याग न होने से होनेवाले असंयम को मिलाकर संयमासंयम कहते हैं।

अकाम निर्जरा – पराधीनतावश अनिच्छापूर्वक भूख-प्यास आदि कष्ट शान्तिपूर्वक सहन करने से जो कर्म झड़ते हैं; उसे अकामनिर्जरा कहते हैं।

बालतप – आत्मज्ञान रहित तप को बालतप कहते हैं।।१५-२१।।

नामकर्म के आस्रव के कारण

आयुकर्म के उपरान्त अब नामकर्म के आस्रव के कारणों की चर्चा करते हैं; जो इसप्रकार हैं –

योगवक्रताविसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ।।२२।।

तद्विपरीतं शुभस्य ।।२३।।

योगों की वक्रता अर्थात् मन, वचन व काय की कुटिलता और विसंवाद (लड़ने-झगड़ने की प्रवृत्ति) से अशुभ नामकर्म का आस्रव होता है।

अशुभ नामकर्म के आस्रव के कारणों से उल्टे कारणों अर्थात् मन-वचन-काय की सरलता और विसंवाद का नहीं होना शुभ नाम कर्म के आस्रव का कारण है।

जब मन-वचन-काय की कुटिलता स्वगत (अपने में ही) होती है, तब उसे **योगवक्रता** कहते हैं तथा जब वही वक्रता दूसरे से की जाती है, उसके आश्रय से झगड़ा किया जाता है तो वह **विसंवाद** कहा जाने लगता है।

सूत्र में आये 'च' शब्द से मिथ्यादर्शन, चुगलखोरी, चित्त की अस्थिरता, तोलने-नापने के बाँट अलग-अलग रखना आदि को भी **योगवक्रता** में लिया जा सकता है।

इसीप्रकार इससे उल्टे भाव शुभनामकर्म के संदर्भ में भी जोड़े जा सकते हैं। जैसे – धार्मिक व्यक्तियों के प्रति आदरभाव, संसार भीरुता, अप्रमाद आदि भाव भी शुभनामकर्म के आस्रव के कारण हैं।।२२-२३।।

तीर्थंकर नामकर्म के आस्रव का कारण

यद्यपि तीर्थंकर नामकर्म भी नामकर्म में आ जाता है; तथापि उसकी विशेषता के कारण उसका उल्लेख पृथक् से किया जा रहा है; जो कि इसप्रकार है –

दर्शनविशुद्धिर्विनयसंपन्नता शीलव्रतेष्वनतिचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोग संवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्यबहुश्रुत प्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ।।२४।।

१. दर्शनविशुद्धि, २. विनयसम्पन्नता, ३. निरतिचार शीलव्रत, ४. अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, ५. अभीक्ष्णसंवेग, ६. शक्तित:त्याग, ७. शक्तित:तप, ८. साधु समाधि, ९. वैयावृत्यकरण, १०. अर्हद्भक्ति, ११. आचार्यभक्ति, १२. बहुश्रुतभक्ति, १३. प्रवचनभक्ति, १४. आवश्यकापरिहाणि, १५. मार्गप्रभावना, १६. प्रवचनवत्सलत्व – ये सोलह भावनायें तीर्थंकर नाम कर्म के आस्रव के कारण हैं।

इन सोलह भावनाओं को सोलहकारण भावना भी कहते हैं।

१. विशुद्ध सम्यग्दर्शन अर्थात् सम्यग्दर्शन के साथ होनेवाली विशुद्धि। अरिहंत द्वारा निरूपित निर्ग्रन्थ मोक्षमार्ग की सम्यग्श्रद्धा पूर्वक तीव्रतम रुचि **दर्शनविशुद्धि** है।

तीर्थंकर प्रकृति का आस्रव-बंध चौथे गुणस्थान से ही आरंभ होता है। इसका स्पष्ट अर्थ यही है कि तीर्थंकर प्रकृति बंधने के लिए विशुद्ध सम्यग्दर्शन की उपस्थिति अनिवार्य है।

यह दर्शनविशुद्धि सोलहकारण भावनाओं में पहली भावना है।

२. दर्शन, ज्ञान, चारित्रस्वरूप मोक्षमार्गरूप परिणामों एवं दर्शन-ज्ञान-चारित्रवंत जीवों के प्रति विनय भावों से सम्पन्न होना **विनयसम्पन्नता** नाम की दूसरी सोलहकारण भावना है।

३. पाँच व्रतों और सात शीलव्रतों का निरतिचार पालन करना **निरतिचार-शीलव्रत** नाम की तीसरी सोलहकारण भावना है।

इन पाँच व्रतों और सात शीलव्रतों का स्वरूप अगले अध्याय में विस्तार से समझाया जायेगा।

४. जीवादि स्वतत्त्वविषयक सम्यग्ज्ञान की आराधना में निरन्तर उपयोग लगा रहना **अभीक्ष्णज्ञानोपयोग** नामक चौथी सोलहकारण भावना है।

जिनागम और जिन-अध्यात्म संबंधी शास्त्रों के स्वाध्याय में निरन्तर लगे रहना ही अभीक्ष्णज्ञानोपयोग है।

५. संसार दु:खों से निरन्तर विरक्त रहना **अभीक्ष्णसंवेग** नाम की पाँचवीं सोलहकारण भावना है।

६. शक्ति के अनुसार त्याग करने की भावना रखना और दान देने की भावना होना **शक्तित:त्याग** नामक छठवीं सोलहकारण भावना है।

शक्तित:त्याग भावना के प्रकरण में तत्त्वार्थराजवार्तिक में आचार्य अकलंकदेव तीन प्रकार के दानों की चर्चा करते हुए एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। वे लिखते हैं –

"**क.** आहार देने से पात्र को उस दिन प्रीति होती है।

ख. अभयदान से उस भव का दु:ख छूटता है। अत: पात्र को संतोष होता है।

ग. ज्ञानदान तो अनेक सहस्त्र भवों के दु:ख से छुटकारा दिलाने वाला है।[१]"

इसप्रकार शक्तित:त्याग सोलहकारण भावना में ज्ञानदान की अभूतपूर्व महिमा बताकर अभीक्ष्णज्ञानोपयोग को ही प्रोत्साहित किया गया है।

७. शक्ति के अनुसार बारह तपों में वृत्ति व प्रवृत्ति रहना **शक्तित:तप** नाम की

१. आचार्य अकलंकदेव : राजवार्तिक, पृष्ठ ७२२

सातवीं सोलहकारण भावना है।

बारह तपों में भी एक स्वाध्याय नामक तप आता है; उसमें भी ज्ञानाराधना पर बल दिया गया है।

८. साधुओं के योग्य समाधि का धारण करना और समाधिस्थ साधुओं की सेवा की भावना रखना **साधुसमाधि** नाम की आठवीं सोलहकारण भावना है।

९. स्वयं की एवं अन्य साधर्मियों की, साधुओं की यथासाध्य सेवा करना **वैयावृत्त्यकरण** नाम की नौवीं सोलहकारण भावना है।

१०-१३. अरिहंतों, आचार्यों, बहुश्रुतवंत उपाध्यायों के प्रति एवं जिन प्रवचनों के प्रति भक्तिभाव का होना क्रमश: **अरहंतभक्ति, आचार्यभक्ति, उपाध्यायभक्ति और प्रवचनभक्ति** नाम की दस से तेरहवीं तक चार सोलहकारण भावनायें हैं।

उक्त चार प्रकार की भक्तियों में भी ज्ञानाराधना ही परिलक्षित होती है।

१४. छह आवश्यकों का परिपालन करना **आवश्यक-अपरिहाणि** नामक चौदहवीं सोलहकारण भावना है।

मुनिराजों और श्रावकों – दोनों के षट् आवश्यकों में स्वाध्याय नामक आवश्यक है; जबकि गृहस्थ के देवपूजा आदि आवश्यक मुनिराजों में छूट जाते हैं।

१५. रत्नत्रय के तेज से अपने आत्मा की प्रभावना करना और दान, पूजा आदि के माध्यम से जिनदर्शन की प्रभावना करना **मार्गप्रभावना** नाम की पन्द्रहवीं सोलहकारण भावना है।

१६. जिसप्रकार गाय बछड़े से नि:स्वार्थ वात्सल्यभाव रखती है; उसीप्रकार साधर्मी भाई-बहिनों से एवं जिन प्रवचनों से नि:स्वार्थ स्नेह रखना **प्रवचनवात्सल्य** नामक सोलहवीं सोलहकारण भावना है।

इसप्रकार हम देखते हैं कि इन सोलहकारण भावनाओं में भी स्वाध्याय की ही प्रमुखता है।।२४।।

गोत्रकर्म के आस्रव का कारण

नामकर्म के आस्रवों के कारणों के उपरान्त अब गोत्र कर्म के आस्रव के कारणों की बात करते हैं; जो इसप्रकार है –

परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ।।२५।।

तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ।।२६।।

लोकमान्य सदाचारी कुल को उच्चगोत्र और लोकनिंद्य असदाचारी कुल को नीचगोत्र कहते हैं।

दूसरों की निन्दा करना, अपनी प्रशंसा करना, दूसरों के विद्यमान गुणों का उच्छादन करना, उन्हें ढांकना (छुपाना) और अपने में अविद्यमान गुणों का उद्भावन करना, उन्हें प्रगट करना – ऐसे भावों से नीचगोत्र का आस्रव होता है।

इसके विपरीत कारणों से अर्थात् दूसरों की प्रशंसा करना, अपनी निन्दा करना, दूसरों के अच्छे गुणों को प्रगट करना और असमीचीन गुणों को ढांकना (छुपाना) अपने समीचीन गुणों को भी प्रगट नहीं करना, गुणीजनों के सामने विनम्र रहना, गुणों के होने पर भी अभिमान न करना – ये सब उच्च गोत्र के आस्रव के कारण हैं।

कुलीन पुरुषों में होने योग्य भावों से उच्च गोत्र और नीच कुलवालों जैसे भावों से नीच गोत्र का आस्रव होता है।।२५-२६।।

अन्तराय कर्म के आस्रव के कारण

अब सबसे अन्त में अन्तराय कर्म के आस्रव के कारणों पर प्रकाश डालते हैं।

विघ्नकरणमन्तरायस्य ।।२७।।

दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य में विघ्न डालने से अन्तराय कर्म का आस्रव होता है।

तात्पर्य यह है कि किसी के दान में अन्तराय डालने से दानान्तराय कर्म का आस्रव होता है, लाभ में अन्तराय डालने से लाभान्तराय कर्म का आस्रव होता है, भोग में अन्तराय डालने से भोगान्तराय कर्म का आस्रव होता है, उपभोग में अन्तराय डालने से उपभोगान्तराय कर्म का आस्रव होता है और वीर्य में अन्तराय डालने से वीर्यान्तराय कर्म का आस्रव होता है।

जो वस्तु एक बार भोगने में आती है, उसे **भोग** कहते हैं।

जो वस्तु बार-बार भोगने में आती है, उसे **उपभोग** कहते हैं।

रोटी, दाल, मिठाई, नमकीन आदि **भोग** हैं और कुर्सी, टेबल, पंखा आदि **उपभोग** हैं।

यदि हमारी ऐसी भावना है कि हमारे सभी कार्य निरन्तराय हों तो हमें भी दूसरे के कार्यों में बाधक नहीं बनना चाहिए, उनके कार्यों में अन्तराय डालने का प्रयास नहीं करना चाहिए। ऐसी भावना भी नहीं करना चाहिए कि उन्हें उनके कार्यों में सफलता प्राप्त न हो।।२७।।

छठवाँ अध्याय : कुछ प्रश्नोत्तर

१. प्रश्न – जब शास्त्रों में ऐसा लिखा है कि एक आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों का बंध निरन्तर होता रहता है तो फिर प्रदोषादि से ज्ञानावरणादि कर्मों का ही आस्रव होता है – इसका क्या अर्थ रह जाता है। तात्पर्य यह है कि ऐसी स्थिति में प्रत्येक कर्म के आस्रव के कारणों को अलग-अलग कैसे बताया जा सकता है ?

१. उत्तर – प्रतिसमय जिन एक समयप्रबद्ध प्रमाण कर्मरज का आस्रव होता है, यद्यपि वे समयप्रबद्ध प्रमाण परमाणु आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों में बंट जाते हैं; तथापि उनमें अनुभाग (फल देने की शक्ति) उक्त भावों के अनुसार पड़ता है।

उक्त कथन को अनुभाग की अपेक्षा समझना चाहिए।

२. प्रश्न – विभिन्न कर्मों के आस्रव के कारणों के रूप में जिन भावों का विवेचन है; वे भाव तो मुख्यरूप से सैनी पंचेन्द्रिय जीवों के ही दिखाई देते हैं। ऐसी स्थिति में एकेन्द्रिय से लेकर असैनी पंचेन्द्रिय तक के जीवों के कर्मास्रव की स्थिति कैसी है ?

२. उत्तर – सैनी ही समझते हैं; अत: सैनी जीवों की अपेक्षा सम्पूर्ण कथन है। असैनी जीवों को अव्यक्त रूप से लगभग इसीप्रकार के भावों से कर्मों का अनुभाग पड़ता है।

३. प्रश्न – क्या तीर्थंकर प्रकृति के बंध के लिए सोलहकारण भावनाओं में सभी भाना अनिवार्य है ?

३. उत्तर – तीर्थंकर प्रकृति का बंध चौथे गुणस्थान से आठवें गुणस्थान के

छठवें अंश तक होता है, होता रहता है; क्योंकि यह निरन्तर बंधी प्रकृति है।

अत: चौथे गुणस्थान से लेकर आठवें गुणस्थान के छठवें भाग तक जितने प्रकार के शुभभाव, विशुद्ध परिणाम होते हैं; लगभग सभी को इनमें शामिल कर लिया गया है।

श्रावक और मुनि – दोनों अवस्थाओं में होने के कारण दोनों अवस्थाओं में होनेवाले विशुद्धपरिणामों को इनमें समेट लिया है। वैसे दर्शनविशुद्धि के साथ तीव्रतम साधर्मी वात्सल्य, स्वाध्याय की लगन और उत्कृष्टतम धर्मप्रभावना की भावना से तीर्थंकर प्रकृति का बंध होने लगता है।

उक्त सम्यग्दृष्टि जीव के हृदय में ऐसा तीव्रतम भाव जागृत होता है कि जो परम सत्य मेरी समझ में आया है; वह सभी साधर्मी भाइयों को प्राप्त हो जावे और वह भगवान आत्मा जन-जन के ज्ञान का ज्ञेय बन जावे तो उसे तीर्थंकर प्रकृति का बंध होने लगता है।

भाषा ज्ञान के अभाव और वाणी की कमजोरी के कारण उसे अपनी बात, आत्मा की बात जन-जन तक पहुँचाने में परेशानी का अनुभव होता है; उसकी भावना अत्यन्त प्रबल होती है; परिणामस्वरूप उसे ऐसी दिव्यवाणी प्राप्त होती है कि वह अठारह महाभाषा और सात सौ लघु भाषाओं में समझ ली जाती है; किसी भी प्रकार व्यवधान नहीं रहता। यही सबकुछ तो तीर्थंकर प्रकृति का कार्य है।

उक्त संदर्भ में पण्डित कैलाशचन्दजी सिद्धान्ताचार्य लिखते हैं –

''इन सबका अथवा इनमें से कुछ का पालन करने से तीर्थंकर नामकर्म का आस्रव होता है; किन्तु **इनमें एक दर्शनविशुद्धि का होना आवश्यक है।**''

ध्यान रखनेयोग्य बात यह है कि इस तीर्थंकर प्रकृति नामक कर्म का आस्रव केवली या श्रुतकेवली के पादमूल में चौथे से सातवें गुणस्थान तक आरंभ होता है। उक्त शर्त आरंभ होने की है, आस्रव होते रहने की नहीं।

४. प्रश्न – जो लोग सच्चे हृदय से सोलहकारण भावनायें भाते हैं; उन सभी को तीर्थंकर प्रकृति का बंध होगा न ?

४. उत्तर – जिन्हें तीर्थंकर प्रकृति का बंध होना होता है; वे अवश्य ही सोलहकारण भावनायें भाते हैं। यह तो आप जानते ही हैं कि १० कोड़ाकोड़ी

सागर में भरतक्षेत्र में मात्र चौबीस तीर्थंकर ही होते हैं; अत: सच्ची सोलहकारण भावनायें तो वे ही भायेंगे कि जिन्हें तीर्थंकर प्रकृति का बंध होना है।

५. प्रश्न – क्या कहना चाहते हैं आप ? क्या उन सभी लोगों को तीर्थंकर प्रकृति का बंध नहीं होगा; जो बड़ी ही भक्ति से सोलहकारण भावना भाते हैं, सोलहकारणव्रत करते हैं, सोलहकारण पूजन करते हैं ?

५. उत्तर – आप ही बताइये कि यदि इसप्रकार की वृत्ति और प्रवृत्तिवालों को तीर्थंकर प्रकृति का आस्रव होगा तो कितने तीर्थंकर होंगे ? फिर केवली और श्रुतकेवली के पादमूल की भी तो शर्त है; वह कितनों को उपलब्ध है ?

अरे, भाई ! यह आस्रव के कारणों की चर्चा आस्रवभावों से विरक्त होने के लिए है, उन्हीं में अनुरक्त होने के लिए नहीं।

धर्म तो कर्म काटने का उपाय है, कर्म बाँधने का नहीं।

रत्नकरण्ड श्रावकाचार में आचार्य समन्तभद्र धर्म को कर्मों का निवारण करनेवाला कहते हैं। उनका कथन इसप्रकार है –

''देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिबर्हणम्।[१]

मैं उस धर्म को कहूँगा, जो कर्मों का निवारण करनेवाला है।''

कोई भी कर्म बाँधने के योग्य नहीं है; क्योंकि आस्रव और बंध तो हेय तत्त्व हैं, उपादेय नहीं।

इस प्रकरण को पढ़कर यदि हमने कर्म में, कर्मास्रव में, कर्मास्रव के कारणों में, कर्मबंध में उपादेयबुद्धि की तो हमने अमृत के सागर महाशास्त्र में से जहर निकालने का कुत्सित प्रयास किया है।

भाई ! आस्रव भावों को बिना किसी भेदभाव के घना दु:ख देनेवाले कहा गया है – **''आस्रव दुखकार घनेरे बुधिवंत तिन्हें निरवेरे।**[२]''

इसलिए शुभास्रव-अशुभास्रव, मंद आस्रव-तीव्र आस्रव, पुण्य आस्रव-पापास्रव – किसी भी प्रकार के आस्रवभाव में उपादेयबुद्धि रखना समझदारी नहीं है।

इसप्रकार यहाँ छठवाँ अध्याय समाप्त होता है। ●

---

१. रत्नकरण्डश्रावकाचार, श्लोक २ २. पं. दौलतरामजी : छहढाला, पाँचवीं ढाल, छन्द ९

छहढाला प्रवचन

सम्यग्ज्ञान की महिमा

सकल द्रव्य के गुन अनन्त पर्याय अनन्ता।
जानै एकै काल प्रकट केवलि भगवन्ता।।
ज्ञान समान न आन जगत में सुख को कारन।
इह परमामृत जन्म-जरा-मृतु रोग निवारन।।४।।
कोटि जन्म तप तपैं ज्ञान बिन कर्म झरैं जे।
ज्ञानी के छिन मांहि त्रिगुप्ति तैं सहज टरैं ते।।
मुनिव्रत धार अनन्त बार ग्रीवक उपजायो।
पै निज आतम ज्ञान बिना सुख लेश न पायौ।।५।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की चौथी ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

केवलज्ञान पूर्ण ज्ञान है, मति-श्रुतज्ञान उस ज्ञान का अवयव है, भले ही वह अधूरा है तो भी वह ज्ञान की ही जाति का अर्थात् वह भी केवलज्ञान और मतिज्ञान की जाति का ही है। एक ही पिता के दो पुत्रों की तरह केवलज्ञान और मतिज्ञान दोनों ज्ञान की ही जाति हैं, एक ज्ञान के ही परिणमन हैं। जिसप्रकार केवलज्ञान में राग का कर्तृत्व नहीं, उसीप्रकार सम्यग्दृष्टि के मति-श्रुतज्ञान में भी ज्ञान से भिन्न रागादि का कर्तृत्व नहीं है, ज्ञानस्वभाव में ही तन्मय होकर परिणमता हुआ, उसका ज्ञान भी केवलज्ञान के समान ही राग और पर का ज्ञाता ही है। उनसे भिन्न रहकर उनको जानता है। ऐसा मति-श्रुतज्ञान अतीन्द्रिय सुख को साथ लेकर प्रगट होता है और बाद में वह सुख बढता-बढता केवलज्ञान होने पर परिपूर्णता को प्राप्त हो जाता है। अहो ! इस ज्ञान और सुख की महिमा की क्या बात ? केवलज्ञान में ऐसी अचिन्त्य सामर्थ्य है कि अनन्त जैसे आकाश को भी वह अनन्त रूप से जान लेता

है, एकसाथ तीनकाल, तीनलोक को जाने, तथापि कहीं विकल्प नहीं करता, अपने वीतरागी चैतन्यरस में ही लीन रहता है। ज्ञान के ऐसे स्वाद का निर्णय सम्यग्दृष्टि को ही होता है। प्रत्येक जीव में ऐसा ज्ञानस्वभाव है, उसकी प्रतीति करके हे जीवो ! उसका सेवन करो।

मति-श्रुतज्ञानी सम्यग्दृष्टि जानता है कि हम भी सर्वज्ञ पद के साधनेवाले सर्वज्ञ देव के पुत्र हैं। गणधर-मुनिवरादि बड़े पुत्र हैं और हम अविरत सम्यक्त्वी छोटे पुत्र हैं, हम भी राग से जुदा पड़ गये हैं। ज्ञान और राग की भिन्नता के भेदज्ञान से राग का संबंध तोड़कर सर्वज्ञ पद के साथ संबंध बांधा है, इसलिए हमारा चित्त परमशान्त हुआ है और गणधरादि की तरह हम भी प्रभु के मोक्षमार्ग में आनन्द से चले जा रहे हैं।

गौतम गणधर को 'सर्वज्ञपुत्र' कहा है। पण्डित बनारसीदासजी ने भी सम्यग्दृष्टि को 'जिनेश्वर का लघुनंदन' कहा है। मुनिराज तो ज्येष्ठ पुत्र हैं और सम्यग्दृष्टि चौथे गुणस्थान कनिष्ठ पुत्र हैं, भले छोटे हैं, किन्तु हैं सर्वज्ञपुत्र ही, सर्वज्ञ की जाति के ही। जैसे सिंह का छोटा बच्चा भी बड़े हाथी को भगा देता है, वैसे ही सम्यग्दृष्टि भले छोटा है, किन्तु है सर्वज्ञ का पुत्र, उसका ज्ञान भले थोड़ा है, किन्तु है सर्वज्ञ की जाति का सम्यग्ज्ञान ही, वह सम्पूर्ण मोहरूपी हाथी को भगाकर मोक्ष को साधे – ऐसी शक्तिवाला है, वह रागादि विकल्पों को अपने ज्ञान से भिन्न जानता है। जड़ क्रिया मैं नहीं, राग मैं नहीं, मैं तो ज्ञान हूँ, पर के पास से मेरी परिणति मुझे लेनी नहीं और पर की परिणति को मैं करता नहीं। मेरे ज्ञान को और राग को ज्ञाता-ज्ञेयपना है, किन्तु कर्ता-कर्मपना नहीं है, एकपना नहीं है, भिन्नपना है – ऐसे भेदज्ञान से जो भेदज्ञानी हुआ उसने अपने चैतन्य के अमृत का स्वाद चखा, तब विष जैसे विषयों का रस उसको नहीं रहा। जैसे पं. बनारसीदासजी पहले अज्ञानदशा में विषय-विलासी थे, परन्तु जब अन्तर में आत्मा का भान हुआ, सत्य स्वरूप समझ में आया और आत्मा के ज्ञान का वीतरागी सुख चखा, तो विषयों से विरक्ति हो गई, तब उन्होंने कहा –

ज्ञानकला उपजी अब मोहि कहूँ गुण नाटक आगम केरो,
जासु प्रसाद सधै शिवमारग वेग मिटे भव वास बसेरो।।

इस आत्मा को सिद्ध समान होने पर भी अज्ञान से मोह दशा में अनन्त काल

व्यतीत हो गया, परन्तु अब हमको सम्यग्ज्ञान कला प्रगटी है, इसलिए हम आत्मा के आनन्द का अनुभव करते-करते शिवमार्ग में जा रहे हैं। देखो, सम्यग्दृष्टि की निशंकता। जिसे सम्यग्दर्शन हुआ वह तो सर्वज्ञ परमात्मा का वंशज हो गया, वह जगत में प्रशंसनीय है। सम्यग्ज्ञान चाहे वह केवलज्ञान हो, चाहे मति-श्रुतज्ञान हो, वह आत्मा के सुख का दातार है। सम्यग्ज्ञान के साथ सदा चैतन्य का अतीन्द्रिय सुख होता है, उसके हाथ में जन्म-मरण के नाश का उपाय आ गया। सम्यग्ज्ञान के बिना जीव चाहे कितनी शुभ क्रियायें करें तो भी जन्म-मरण का अन्त नहीं हो सकता। अत: हे जीवो ! जन्म-मरण का नाश करने के लिए तुम सम्यग्ज्ञान का सेवन करो।

अरे ! सम्यग्ज्ञान के बिना स्वर्ग का देव भी दु:खी ही है, चैतन्य के सुख का अंश भी वहाँ नहीं है। जिसको आत्मज्ञान नहीं है, वह जीव त्यागी होकर तप तपे और स्वर्ग में जावे तथापि लेशमात्र सुख प्राप्त नहीं करता। तप में भी वह 'तपता' है-जलता है। चैतन्य के प्रतपनरूप सच्चे तप में तो परम शान्ति का वेदन होता है, अतीन्द्रिय शान्ति के बरफ में आत्मा ऐसा ठहरता है कि बाहर का लक्ष्य भी नहीं रहता, यही सच्चा तप है। जिसे इस तप का भान नहीं, उसे अज्ञान सहित व्रत-तपादि शुभ क्रियाओं में जो कर्म खपते हैं, वे कर्म ज्ञानी को तो सहज में खप जाते हैं। त्रिगुप्ति अर्थात् मन-वचन-काय से भिन्न ज्ञान परिणति, उसके कारण ज्ञानी को कर्मों की निर्जरा होती ही रहती है – ऐसा जानना। मेरी चैतन्य वस्तु कर्म रहित है, जिसको इसका विचार भी नहीं, उसे भला कर्मों की वास्तविक निर्जरा कैसे हो सकती है ? नवीन बंध के अभावपूर्वक होनेवाली निर्जरा ही सच्ची निर्जरा है और वह ज्ञानी को होती है।

मनुष्य होकर जैनकुल जैसे उत्तम कुल में जन्म लेने का महान सौभाग्य मिला हो, एक करोड़ पूर्व की आयु हो और आठ वर्ष की उम्र में आत्मा के ज्ञान बिना मुनि दीक्षा लेकर जीवन भर द्रव्यलिंगपने पंचमहाव्रतों का भलीभाँति पालन करे, तप करे छह-छह माह के उपवास किया करे – इसप्रकार शुभराग की क्रियायें बराबर करे (और वह भी एक बार नहीं, अपितु संसार में भटकते-भटकते करोड़ों भव तक करे) और उससे जितने कुछ कर्म निर्जरित हों उनकी अपेक्षा ज्ञानी के सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान

के कारण एक उच्छवास मात्र में अनन्त गुणे कर्म खिर जाते हैं और मिथ्यात्वादि नवीन कर्म तो उसके बंधते ही नहीं, जबकि ज्ञानी अव्रती हो, फिर भी उसके मिथ्यात्वादि कर्म नहीं बंधते और अज्ञानी की अपेक्षा उसके बहुत कर्म खिर जाते हैं।

राग से जुदा पड़ी हुई ज्ञानचेतना जब ज्ञानी के अन्तर में जगी, तब अनन्त कर्म खिर जाते हैं। अरे, ज्ञान चेतना की अपार महिमा की जगत को खबर नहीं है, ज्ञान चेतना अनादि के संसार को एक क्षण में काट देती है और अल्पकाल में अनन्त काल के मोक्ष सुख को प्रदान करती है। अज्ञान भाव से जीव करोड़ों-अरबों वर्ष तक शुभ क्रिया करे, तथापि उसके भव कम नहीं होते और आत्मा के सच्चे सुख का अंश भी प्रकट नहीं होता। अज्ञानी जीव इसप्रकार अनन्त बार नवें ग्रैवेयक गया तो भी, शास्त्र कहते हैं कि आत्मज्ञान बिना, अज्ञान के कारण मात्र दुःख ही भोगा, उसे रंच भी धर्म नहीं हुआ। अरे ! अज्ञान से सुख या धर्म कहाँ से होगा ? जिसको शुद्ध स्वभाव का अनुभव है – ऐसा ज्ञानी विकल्प से पार होकर ज्ञानस्वरूप में एक क्षण भी ज्ञान को एकाग्र करे तो अनन्त कर्म छँट जाते हैं और उसके ज्ञान में चैतन्य के अतीन्द्रिय आनन्द का वेदन होता है।

ज्ञान जब निर्विकल्प शुद्ध उपयोगरूप होकर अतीन्द्रिय आनन्द के अनुभव में ठहरा, उस दशा की तो बात क्या ? उसके अतिरिक्त काल में भी ज्ञानी के सुगमता से बहुत कर्म खिरते ही रहते हैं। अज्ञानी को कष्ट सहन करते हुए भी मोक्ष के कारण स्वरूप निर्जरा नहीं होती, जबकि ज्ञानी को कष्ट बिना सहजपने कर्म छूट जाते हैं। अरे, मोक्ष की साधनभूत निर्जरा में तो आनन्द का वेदन होगा कष्ट का नहीं, तप में कष्ट कैसा ? तप में तो आनन्द ही है। जहाँ कष्ट लगे वहाँ तो आर्तध्यान है। धर्मध्यान में तो आनन्द है, शान्ति है। ऐसी शान्ति के वेदन से ज्ञानी के क्षण भर में अनन्त कर्म नष्ट हो जाते हैं।

अरे, ज्ञान की कीमत की जगत को खबर नहीं है। राग से भिन्न परिणमित सम्यग्ज्ञान अचिन्त्य शक्तिवाला है, परम शान्तिवाला है। भगवान ! तू जाग। अपने ज्ञान की जागृत दशा कर। इसके बिना शुभराग से तुझे कोई लाभ होनेवाला नहीं है। जहाँ सम्यग्दर्शन नहीं, आत्मा का आनन्द नहीं, ऐसे अज्ञान सहित महाव्रत जीव ने

अनन्त बार धारण किये और नवमें ग्रैवेयक तक गया; परन्तु वहाँ किंचित्मात्र भी सुख नहीं पाया। राग के फल में सुख कहाँ से मिले ? बापू ! चैतन्य का अनुभव राग से पार है, चैतन्य का सुख राग से पार है। अज्ञानी ने महाव्रत किए, दान-पूजादि किए; किन्तु वह तो विकल्प है, राग है, वह चैतन्य के स्वभाव की जाति नहीं है, भिन्न जाति है अर्थात् कुजाति है। देखो, सन्तजन सत्यवस्तु को प्रसिद्ध कर रहे हैं कि हे भाई ! पुण्य के राग से पार आत्मा के ज्ञान बिना तेरे द्वारा अनन्त बार महाव्रत धारण करने पर भी सुख का लेश भी तुझे नहीं मिला; क्योंकि तूने राग से पार ज्ञान का किंचित् भी सेवन नहीं किया। दुःख के कारणभूत राग का ही सेवन किया। जिसमें राग की क्रिया ही नहीं, ऐसे ज्ञानस्वरूप भगवान आत्मा को नहीं जाना और राग के सेवन में हित मानकर सन्तुष्ट हो गया, इसलिए तेरा अनन्तकाल सुख बिना बीत गया। अब ऐसा अवसर पाकर तू चेत..चेत ! अपनी आत्मा का लक्ष्य करके आत्मा का ज्ञान कर। ऐसे ज्ञान से तुझे अपूर्व सुख का अनुभव होगा।

(क्रमशः)

दशलक्षण पर्व हेतु आमंत्रण शीघ्र भेजें

दशलक्षण महापर्व के अवसर पर प्रवचनार्थ विद्वानों को बुलाने हेतु पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट को आमंत्रण-पत्र समाज/मंदिर/संस्था के लेटर पेड पर शीघ्र भेजें; ताकि समय रहते उचित व्यवस्था की जा सके।

पत्र में अपना पूर्ण पता (पिनकोड सहित) एवं फोन नं. (एस.टी.डी. कोड सहित) भेजें एवं तत्काल संपर्क की सुविधा हेतु ई-मेल आई.डी. हो तो अवश्य भेज देवें।

अनेक बार समाज द्वारा दशलक्षण पर्व के अवसर पर प्रवचन हेतु विद्वानों को अपने यहाँ बुलाने का आमंत्रण अन्तिम समय पर प्राप्त होता है, जिससे व्यवस्था करने में कठिनाई होती है; अतः समाज/मंदिर के व्यवस्थापकों से निवेदन है कि वे अपने यहाँ से आमंत्रण-पत्र तत्काल भिजवायें। इसके अतिरिक्त विद्वत्गण भी अपनी स्वीकृति शीघ्र ही भेजें।

– मंत्री

पत्राचार का पता – **दशलक्षण पर्व व्यवस्था विभाग,**
ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.) 302015
फोन नं.-0141-2705581, 2707458, फैक्स – 0141-2704127
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

नियमसार प्रवचन –

एषणा समिति का स्वरूप

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के शुद्धभावाधिकार की 63वीं गाथा पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

छंद मूलत: इसप्रकार है –

कदकारिदाणुमोदणरहिदं तह पासुगं पसत्थं च।
दिण्णं परेण भत्तं समभुत्ती एसणासमिदी।।६३।।

(हरिगीत)

स्वयं करना कराना अनुमोदना से रहित जो।
निर्दोष प्रासुक भुक्ति ही है एषणा समिति अहो।।६३।।

स्वयं की कृत, कारित, अनुमोदना से रहित, पर के द्वारा दिया हुआ प्रासुक और प्रशस्त भोजन करनेरूप सम्यक् आहार ग्रहण एवं तत्संबंधी शुभभाव एषणासमिति है।

(गतांक से आगे....)

अब (श्री प्रवचनसार की २२७वीं गाथा द्वारा) निश्चय का उदाहरण कहा जाता है। वह इसप्रकार है –

जस्स अणेसणमप्पा तं पि तवो तप्पडिच्छगा समणा।
अण्णं भिक्खमणेसणमध ते समणा अणाहारा।।

(हरिगीत)

अरे भिक्षा मुनिवरों की एषणा से रहित हो।
वे यतीगण ही कहे जाते हैं अनाहारी श्रमण।।

जिसका आत्मा एषणारहित है (अर्थात् जो अनशनस्वभावी आत्मा को जानने के कारण स्वभाव से आहार की इच्छा रहित है) उसे भी तप है; (और) उसे प्राप्त करने के लिये (अनशनस्वभावी आत्मा को परिपूर्णरूप से प्राप्त करने के लिये) प्रयत्न करनेवाले श्रमणों को अन्य (स्वरूप से भिन्न ऐसी) भिक्षा, एषणा बिना (एषणादोष रहित) होती है; इसलिये वे श्रमण अनाहारी है।

यह प्रवचनसार की मूलगाथा है। जिसका आत्मा एषणारहित है अर्थात् जो अनशन स्वभावी आत्मा को जानता होने से स्वभाव से आहार की इच्छारहित है उसको

भी तप है। चिदानन्द स्वभाव का भान करके आत्मस्वरूप में झूलते हुए मुनि ने प्रथम से ही निर्णय किया है कि आहार लेने का भाव ही मेरे स्वरूप में नहीं है। आहार का एक रजकण भी आत्मा ले सकता या छोड़ सकता नहीं, तथा आहार लेने की वृत्ति भी आत्मा के स्वभाव में नहीं है – ऐसा प्रथम से ही, आत्मा का सच्चा भान होते ही, मुनि ने निर्णय किया है। आहार का आना तो जड़ की पर्याय है, निर्दोष आहार लेने की वृत्ति शुभराग है। आहार आनेरूप जड़ की पर्याय के समय शुभवृत्ति होती है, अशुभ नहीं होती, उसे व्यवहार एषणा कहते हैं – वह धर्म का कारण नहीं है।

धर्म का कारण जो एषणा है, उसका स्वरूप अब कहते हैं। आत्मा ज्ञानान्दस्वरूप है, उसमें यह जड़ आहार तो है ही नहीं, आहार संबंधी इच्छा का भी उसमें त्रिकाल अभाव है। एषणा अर्थात् निर्दोष आहार की इच्छा मेरे स्वरूप में नहीं है, इस इच्छा से रहित ही मेरा स्वभाव है – ऐसा निर्णय करना वह प्रथम धर्म है।

आत्मा अखण्ड चिदानन्द ज्ञानमूर्ति है। उसका भान होने के पश्चात् विशेष अन्तरस्थिरता बढ़ने पर मुनिदशा होती है। ''मैं ज्ञानानन्द चैतन्यमूर्ति आत्मा हूँ, मेरा आत्मा आहार और आहार की इच्छा रहित ही त्रिकाल है।'' आहार, पुण्य-पाप अथवा व्यवहार-रत्नत्रय रहित आत्मा का स्वभाव है – ऐसे अनशनस्वभावी आत्मा का जिसको भान हुआ है अर्थात् सम्यग्दर्शन-ज्ञान प्रकट हुआ है उसका चिदानन्द आत्मा एषणारहित है – ऐसा भान वर्त्तता है, उसको वही तप है। जिसका आत्मा अनशनस्वभावी आत्मा को परिपूर्णपने प्राप्त करने का कामी है, ऐसे सहजदशा में झूलते निर्ग्रन्थ मुनियों को स्वरूप से जुदी ऐसी भिक्षा एषणादोष रहित होती है। अतः भगवान उन मुनियों को अनाहारी कहते हैं।

इस गाथा में तीन विशेषतायें बतलाई हैं :–

(१) 'आहार-जल जड़ हैं, उसका ग्रहण त्याग मेरे स्वरूप में नहीं है; आहार-पानी रहित ही मेरा स्वभाव त्रिकाल है' – ऐसे अनशनस्वभावी आत्मा का जिसे भान है, उसे वही तप है।

(२) मुनि ज्ञानानन्द आत्मा को – आहार तथा इच्छा, विकल्प, पुण्यादि की लागनी रहित आत्मा को पूर्ण प्राप्त करने का पुरुषार्थ कर रहे हैं।

(३) मुनियों की अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यानावरणी, प्रत्याख्यानावरणी – इन तीन कषाय रहित सहजदशा होती है, उस दशा में आहार का विकल्प उठता है, वह आत्मा का स्वरूप नहीं है। आहार की इच्छा स्वरूप से भिन्न है ऐसी श्रद्धा, ज्ञान और अन्तरस्वरूप लीनता प्रकटी है, तथापि विकल्प उठा है उसे तोड़कर स्वभाव

में ठहरे हैं, इसलिए उन मुनिराज को एषणारहित कहते हैं। ऐसी भूमिका जिनके वर्त्तती है, उन्हें अनाहारी कहते हैं।

इसीप्रकार श्री गुणभद्राचार्य ने आत्मानुशासन के २२५वें श्लोक में कहा है –

(मालिनी)

यमनियमनितान्तः शांतबाह्यान्तरात्मा
परिणमितसमाधिः सर्वसत्त्वानुकंपी ।
विहितहितमिताशी क्लेशजालं समूलं
दहति निहतनिद्रो निश्चिताध्यात्मसारः ।।

(हरिगीत)

जो सभी के प्रति दया समता समाधि के भाव से।
नित्य पाले यम-नियम अर शान्त अन्तर बाह्य से॥
शास्त्र के अनुसार हितमित असन निद्रा नाश से।
वे मुनीजन ही जला देते क्लेश के जंजाल को॥

जिसने अध्यात्म के सार का निश्चय किया है, जो अत्यन्त यमनियम सहित है, जिसका आत्मा बाहर से और भीतर से शान्त हुआ है, जिसे समाधि परिणमित हुई है, जिसे सर्व जीवों के प्रति अनुकम्पा है, जो विहित (शास्त्राज्ञा के अनुसार) हित-मित भोजन करनेवाला है, जिसने निद्रा का नाश किया है, वह (मुनि) क्लेशजाल को समूल जला देता है।

जिसने अध्यात्म के सार का निश्चय किया है। अध्यात्म का सार अर्थात् ''मैं ज्ञानदर्शनस्वभावी हूँ, परमानन्द की मूर्ति हूँ, शुभाशुभ रागरहित त्रिकाली आत्मा हूँ, शरीर-वाणी आदि पदार्थों की क्रिया आत्मा नहीं कर सकता, आहार का ग्रहण-त्याग मेरे स्वभाव में है ही नहीं'' – इसप्रकार जिसने सभी पहलुओं से सर्वप्रथम आत्मा का निर्णय किया है, वह जीव सम्यग्दृष्टि है। ऐसे आत्मा का निर्णय करने के बाद स्वरूप में विशेष रमणता जिसने प्रकट की है वह जीव अत्यन्त यम-नियम सहित है, स्वरूपरमणतारूप चारित्रयुक्त है।

जो बाहर से और अन्दर से शान्त हुआ है, जिसको समाधि परिणमी है, जिसको सब जीवों के प्रति अनुकम्पा है, जो शास्त्र की आज्ञानुसार हित-मित भोजी है, जिसने निद्रा का नाश किया है, वह आत्मलीन भावलिंगी मुनि क्लेशजाल का समूल नाश करता है।

आत्मा चिदानन्दमूर्ति है, पुण्य-पाप विकार से रहित उसका स्वभाव है – ऐसे

भान सहित जो मुनि स्वरूप में विशेष स्थिर हो गए हैं, उनके बाहर से कलुषता अथवा उद्धतपना नहीं होता, तथा अन्तर में अनन्तानुबन्धी आदि तीन कषायों का उनके अभाव है, विशेष शान्ति, विशेष आनन्द, विशेष अनाकुल-स्वभाव प्रकट हुआ है, इसलिए वे मुनि बाहर से और अन्दर से शान्त हुए हैं – ऐसा कहा।

पुनश्च, छठे-सातवें गुणस्थान में झूलते मुनि को मन-वाणी-देह से पार तथा पुण्य-पाप रहित अन्तरंग शान्तदशा-वीतरागी स्वरूपलीनता प्रकटी है, अतः उनके समाधि परिणमी है – ऐसा कहा। वे वीतरागी मुनि छठे गुणस्थान में आवें तब विकल्प उठे कि आहार ग्रहण करें। आहार भी भगवान वीतराग की आज्ञा प्रमाण-शास्त्रानुसार हित-मित ही लेते हैं।

छठे-सातवें गुणस्थान में हजारों बार झूलते मुनि के छठे गुणस्थान में अल्प निद्रा होती है। छठी भूमिका में किंचित् निद्रा आकर फिर तुरन्त ही अन्तर्मुहूर्त में सातवीं भूमिका में आते हैं। मुनिराज घन्टे दो घन्टे निद्रित हो जावें – ऐसा नहीं होता, कारण कि वे छठे गुणस्थान में थोड़े काल रहकर शीघ्र ही सातवें में आ जाते हैं। इसप्रकार स्वरूप में उग्र लीनता द्वारा जिनको गहरी निद्रा का नाश हुआ है, वे मुनिराज क्लेशजाल को समूल नाश करके वीतराग होकर परमशान्तदशा को प्राप्त होते हैं।

पाँचवीं भूमिकावाले को भी अंशरूप में उपर्युक्त प्रमाण ही समझना। उसके भी ''मैं अखण्ड ज्ञायकद्रव्य हूँ, शरीर तथा आहार की क्रिया से मुझे हानि-लाभ नहीं है'' – ऐसे अध्यात्म के सार का – निज शुद्धात्मा का यथार्थ निर्णय हुआ है। वह भी अपनी भूमिका प्रमाण दो कषायों का नाश करके तदनुसार यम-नियम सहित है। जीवनपर्यन्त नियम लेने को यम कहते हैं। महाव्रत अथवा अणुव्रत जीवन पर्यन्त के लिए होते हैं, अतः उन्हें यम कहते हैं। थोड़े काल तक धारण किया जाय उसे नियम कहते हैं। मुनिराज आहार के लिए जाते समय अभिग्रह करते हैं, वह थोड़े काल तक का होने से नियम कहा जाता है। आत्मा में जीवनभर के लिए राग छूटा वह यम और थोड़ा राग छूटा वह नियम कहलाता है। यथार्थ वस्तुस्थिति के भान – आत्मज्ञान होने के बाद की यह बात है। आत्मभान होने से पहले कोई भी यम-नियम आदि सच्चे नहीं होते।

६३वीं गाथा की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज श्लोक कहते हैं –

(शालिनी)

भुक्त्वा भक्तं भक्तहस्ताग्रदत्तं
ध्यात्वात्मानं पूर्णबोधप्रकाशम् ।

तप्त्वा चैवं सत्तपः सत्तपस्वी
प्राप्नोतीद्धां मुक्तिवारांगनां सः ।।८६ ।।

(हरिगीत)

भक्त के हस्ताग्र से परिशुद्ध भोजन प्राप्त कर।
परिपूर्ण ज्ञान प्रकाशमय निज आत्मा का ध्यान धर।।
इसतरह तप तप तपस्वी निरन्तर निज में मगन।
मुक्तिरूपी अंगना को प्राप्त करते संतजन।। ८६ ।।

भक्त के हस्ताग्र से (-हाथ की उँगलियों से) दिया गया भोजन लेकर, पूर्ण ज्ञानप्रकाशवाले आत्मा का ध्यान करके, इसप्रकार सत् तप को (-सम्यक् तप को) तपकर, वह सत् तपस्वी (-सच्चा तपस्वी) दैदीप्यमान मुक्तिवारांगना को (-मुक्तिरूपी स्त्री को) प्राप्त करता है।

आत्मज्ञानी मुनि को स्वभाव की विशेष लीनता के पुरुषार्थ से विशेष समाधिशान्ति प्रकट हुई है। सहजस्वरूप की रमणता में लीन हुए मुनि जब सातवीं भूमिका में विशेष नहीं ठहर पाते तब किंचित् विकल्प उठता है और आहारादि लेने के प्रति लक्ष कुछ भटक जाता है। श्रद्धालु भक्त के हाथ की उँगलियों से देने में आया हुआ भोजन लेकर, पूर्ण प्रकाशवाले आत्मा का ध्यान करके, इसप्रकार सच्चे तप को तपकर सच्चे तपस्वी (भावलिंगी मुनिराज) देदीप्यमान-शोभायमान मुक्तिवारांगना को, मुक्तिरूपी आत्मा की पूर्णशुद्धपरिणति को प्राप्त करते हैं।

श्रद्धा, शक्ति, अलुब्धता, भक्ति, ज्ञान, दया और क्षमा – ये दाता के सात गुणसहित शुद्ध योग्य आचारवाले भक्त के हस्ताग्र से – हाथ की उँगलियों से – भक्तिपूर्वक देने में आया हुआ आहार मुनि लेते हैं। भक्त उपर्युक्त गुणयुक्त होना चाहिये। अभक्ति आदि प्रदर्शित करने वाले के हाथ से मुनि आहार नहीं लेते। भक्तिपूर्वक दिया हुआ भोजन लेकर, आहार सम्बन्धी विकल्प तोड़कर ''यह मेरा आत्मा पूर्णज्ञान का सूर्य है, मेरे स्वभाव में दया, दान, अथवा ज्ञानप्रकाश में लीन होकर, ज्ञानस्वभाव में एकाग्रतारूप सच्चा तप तपकर, वे सच्चे मुनि मुक्तिरूपी स्त्री का वरण करते हैं।

यहाँ 'पूर्ण प्रकाशवाले आत्मा का ध्यान करके' – ऐसा कहा, वह केवलज्ञान की बात नहीं है। यह तो त्रिकालीपूर्ण ज्ञानस्वभाव से भरपूर है उसकी बात है, उसका ध्यान – एकाग्रता करके मुक्ति को प्राप्त किया जाता है।

(शेष पृष्ठ 32 पर …)

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : पर्याय का बिगाड़ मिटकर पर्याय में सुधार कैसे हो ?

उत्तर : पर्याय स्वयं ही पर का लक्ष्य करके बिगड़ी है, यदि वह स्वयं ही पर का लक्ष्य छोड़कर स्वभाव का लक्ष्य करे तो स्वयं से ही स्वयं सुधर जाये। स्व का लक्ष्य करना ही पर्याय का सुधार है।

प्रश्न : आत्मा में अनंत धर्म होने पर भी उसे ज्ञानमात्र ही क्यों कहा जाता है ?

उत्तर : आत्मा की जो ज्ञप्तिक्रिया होती हे, उसमें अनन्त धर्मों का समुदाय एक साथ ही परिणमन करता है। अकेला ज्ञान ही नहीं परिणमता; परन्तु उस ज्ञान के साथ ही आनन्द, श्रद्धा, जीवत्व आदि अनन्त गुणों का परिणमन भी होता है। एक ज्ञानगुण को भिन्न लक्ष में लेकर धर्मी नहीं परिणमता; किन्तु ज्ञान के साथ अनन्त धर्मों को अभेदपने लक्ष में लेकर धर्मी जीव एक ज्ञप्तिमात्र भावरूप से परिणमन करता है।

प्रश्न : संसारदशा दु:खरूप है और मोक्षदशा सुखरूप है; तथापि इन दोनों में अन्तर नहीं है – ऐसा क्यों कहा ?

उत्तर : संसार और मोक्ष दोनों ही एकसमय की पर्याय हैं, इन दोनों पर्यायों में त्रिकाली वस्तु की अपेक्षा से अन्तर नहीं है। यह बहुत गंभीर बात है। क्षायिकादि चार भावों को परद्रव्य, परभाव कहकर हेय कहा है। व्यवहार के पक्षवालों को तो यह बात सुनना भी कठिन पड़ेगा। संसार और मोक्ष दोनों पर्यायें हैं अवश्य, किन्तु वे आश्रय करने योग्य नहीं हैं। आश्रय करने योग्य तो एक त्रिकाली द्रव्य ही है। नियमसार गाथा-50 में बहुत गंभीर और सूक्ष्म बात की है। आचार्यदेव ने अपने लिये यह शास्त्र बनाया है, उसमें केवलज्ञानादि क्षायिकभावों को परभाव, परद्रव्य कहकर हेय कहा है। यह परमात्मा के घर की बातें हैं, परमसत्य हैं। अन्दर से समझने की लगन लगे और समझ में न आवे – ऐसा नहीं हो सकता, समझ में आवेगा ही।

प्रश्न : एक वस्तु दूसरी वस्तु की नहीं, अत: उसका अन्य वस्तु के साथ कोई सम्बन्ध नहीं, फिर शास्त्र में निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध का कथन क्यों ?

उत्तर : यह तो नैमित्तिकभाव अपने से परिणमता है, उससमय निमित्त कौन था, उसका ज्ञान कराने को शास्त्र में कथन आता है। निमित्त – निमित्त में और नैमित्तिक – नैमित्तिक में परिणमन करता है; एक वस्तु दूसरी वस्तु में कुछ नहीं करती, दोनों वस्तुयें भिन्न ही है। एक वस्तु दूसरी वस्तु को करे भी कैसे ?

प्रश्न : जब निमित्त वास्तविक कारण नहीं है, तो फिर उसे कारण कहा ही क्यों जाता है ?

उत्तर : जिसे निमित्त कहा जाता है, उस पदार्थ में उसप्रकार की – निमित्तरूप होने की योग्यता है; इसलिए अन्य पदार्थों से उसे भिन्न पहिचानने के लिए उसकी 'निमित्तकारण' संज्ञा दी गई है। ज्ञान का स्वभाव स्व-परप्रकाशक है, इसलिये वह पर को भी जानता है और साथ ही पर में निमित्तपने की योग्यता है – यह भी जानता है।

प्रश्न : उपादान को अनुकूल निमित्त है और निमित्त को अनुरूप उपादान है; फिर भी एक-दूसरे में कुछ करते नहीं – ऐसी स्थिति में निमित्त का क्या काम है ?

उत्तर : घड़ा बनने में हलवाई निमित्त नहीं होता, कुंभकार ही होता है – ऐसा बतलाना प्रयोजन है।

प्रश्न : घड़ा कुंभकार तो नहीं बनाता, तो क्या मृतिका से भी नहीं बनता ?

उत्तर : घड़ा घड़े की पर्याय के षट्कारक से स्वतंत्रतया बनता है, मिट्टी द्रव्य से भी नहीं; मिट्टी द्रव्य तो सदाकाल विद्यमान है। घड़ा, रामपात्र आदि पर्यायें नई-नई उत्पन्न होती हैं और वे पर्यायें अपने षट्कारक से स्वतंत्र ही होती हैं।

प्रश्न : चावल वर्षों तक रखा रहे पर पानी का निमित्त मिलेगा तभी पकेगा ?

उत्तर : चावल जब पकेगा तब अपने से अपनी योग्यता से पकेगा और उस काल में पानी निमित्तरूप से सहज ही होगा - ऐसा वस्तु स्वभाव है।

प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक पर्याय अपने स्वकाल में अपनी योग्यतानुसार ही होती है। उसकाल में बाह्यवस्तु पर निमित्त का आरोप आता है। यदि एक द्रव्य अन्य द्रव्य की पर्याय करे तो वह अन्य द्रव्य ही कहाँ रहे। अनन्त द्रव्य अस्तिरूप हैं। उन सबको भिन्न-भिन्न अस्तिरूप मानने से ही श्रद्धा-ज्ञान सच्चे होंगे।

समाचार दर्शन -

49वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर संपन्न

● देश के विभिन्न प्रान्तों से पधारे हुये 1500 से अधिक एवं सैंकड़ों स्थानीय आत्मार्थी ज्ञानयज्ञ में लाभान्वित ●प्रात: 5 से रात्रि 10 बजे तक विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से 16 घण्टे अविरल ज्ञानगंगा प्रवाहित ● शिविर में लगभग 75 विद्वानों द्वारा धर्मप्रभावना।

मेरठ (उ.प्र.) : यहाँ तीर्थंकर महावीर मार्ग स्थित जैन बोर्डिंग हाउस में दिनांक 24 मई से 10 जून तक पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित एवं युवा फैडरेशन मेरठ द्वारा आयोजित 49वाँ वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर संपन्न हुआ।

इस अवसर पर चौबीस तीर्थंकर महामंडल विधान का आयोजन किया गया, जिसके आमंत्रणकर्त्ता श्री नरेन्द्रकुमारजी जैन अम्बुज जैन महावीर नगर, विधान के उद्घाटनकर्त्ता श्री जिनेन्द्रकुमारजी जैन दिल्ली थे। डॉ. भारिल्ल ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि अध्यात्म विद्या को संगमरमर के पत्थरों पर खुदवाकर सुरक्षित नहीं किया जा सकता; अपितु कोमलमति बालकों में तत्वज्ञान को प्रतिष्ठित करने पर ही जिनधर्म सुरक्षित रह सकता है। इसके अतिरिक्त अनेक महानुभावों ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

प्रात:कालीन प्रवचन – प्रतिदिन आध्यात्मिकसत्पुरुष गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सी.डी.प्रवचन के अतिरिक्त तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा 'मैं स्वयं भगवान हूँ' विषय पर मार्मिक प्रवचन हुये।

रात्रिकालीन प्रवचन – ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना द्वारा ज्ञानस्वभाव विषय पर प्रतिदिन हुये प्रवचनों के पूर्व पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, पण्डित संजयजी शास्त्री मंगलायतन, पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल मुम्बई, पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर, पण्डित मनीषजी शास्त्री रहली, पण्डित सोनूजी शास्त्री सोनगढ के विभिन्न विषयों पर प्रवचन हुये।

दोपहर की व्याख्यानमाला में – पण्डित नरेन्द्रजी जैन जबलपुर, पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर, डॉ. दीपकजी वैद्य जयपुर, पण्डित निखलेशजी शास्त्री दलपतपुर, पण्डित रितेशजी शास्त्री डडूका, पण्डित राजेशजी शास्त्री जयपुर, पण्डित सतीशजी मंगलायतन, पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर, पण्डित निलयजी शास्त्री आगरा, पण्डित गणतंत्रजी शास्त्री आगरा, पण्डित विनीतजी अलीगढ, पण्डित शाकुलजी शास्त्री मेरठ, पण्डित जिनेशजी शेठ मुम्बई आदि विद्वानों के विविध विषयों पर व्याख्यान हुए।

प्रशिक्षण कक्षायें – बालबोध प्रशिक्षण की सैद्धान्तिक कक्षा पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा ने एवं शिक्षण पद्धति की मुख्य कक्षा पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर व पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा ने ली।

प्रवेशिका प्रशिक्षण की सैद्धान्तिक कक्षा पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली ने एवं शिक्षण पद्धति की मुख्य कक्षा पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर व पण्डित निखलेशजी शास्त्री दलपतपुर द्वारा ली गई।

प्रशिक्षण अभ्यास कक्षाओं में पण्डित नरेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित पीयूषजी शास्त्री जयपुर, पण्डित निखलेशजी दलपतपुर, पण्डित राजेशजी शास्त्री शाहगढ, पण्डित सतीशजी शास्त्री अलीगढ, पण्डित धमेन्द्रजी शास्त्री कोटा, पण्डित रीतेशजी डडूका, पण्डित निलयजी शास्त्री आगरा, पण्डित विनीतजी शास्त्री ग्वालियर, पण्डित सौरभजी शास्त्री कोटा, पण्डित जिनेशजी शेठ मुम्बई, पण्डित विवेकजी शास्त्री अमरमऊ, श्रीमती कमलाबाई भारिल्ल जयपुर, श्रीमती रंजनाजी बंसल अमलाई, श्रीमती लता जैन देवलाली, श्रीमती मोना भारिल्ल जयपुर, श्रीमती स्तुति जैन जयपुर का सहयोग प्राप्त हुआ।

प्रात:कालीन प्रौढकक्षायें – पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा, डॉ. महावीरप्रसादजी शास्त्री उदयपुर, पण्डित प्रवीणजी शास्त्री बांसवाड़ा आदि विद्वानों द्वारा ली गईं।

प्रौढ़ कक्षायें – प्रात:काल निमित्त-उपादान की कक्षा ब्र.सुमतप्रकाशजी खनियांधाना द्वारा एवं दोपहर में तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-1 की कक्षा पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली एवं क्रमबद्धपर्याय की कक्षा पण्डित मनीषजी शास्त्री रहली ने ली। श्री अध्यात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने सभी कक्षाओं के संचालन में उपयोगी सुझाव व निर्देश दिये।

बालवर्ग हेतु प्रतिदिन तीनों समय अनेक कक्षाओं का आयोजन किया गया। इन कक्षाओं का संचालन डॉ. शुद्धात्मप्रभाजी टडैया मुम्बई एवं आराध्य टडैया मुम्बई के निर्देशन में प्रशिक्षणार्थी अध्यापकों द्वारा किया गया, जिसमें सैंकड़ों बच्चे सम्मिलित हुये।

दिनांक 31 मई को युवा फैडरेशन का 38वाँ राष्ट्रीय अधिवेशन संपन्न हुआ, जिसमें देश के विभिन्न भागों से पधारे अनेक प्रतिनिधियों व पदाधिकारियों ने भाग लिया।

दिनांक 9 जून को सायंकाल प्रशिक्षणार्थी सम्मेलन में अनेक प्रशिक्षणार्थियों ने शिविर के बारे में अपने अनुभव सुनाये और अपने-अपने गांव जाकर पाठशाला प्रारम्भ करने का संकल्प व्यक्त किया।

दिनांक 10 जून को प्रात: नित्यनियम पूजन के उपरांत दीक्षान्त समारोह में शिविर की रिपोर्ट पण्डित कमलचंदजी पिड़ावा ने प्रस्तुत की। प्रशिक्षण शिविर के अध्यापक पण्डित नरेन्द्रकुमारजी जबलपुर का भी उनके द्वारा अनेक वर्षों तक प्रदान की गई अमूल्य सेवाओं के लिए डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल द्वारा शॉल ओढाकर हार्दिक अभिनन्दन किया गया।

इस शिविर की सबसे महत्वपूर्ण बात यह रही कि इसके आयोजकों ने सभी को **'दान के लिये नहीं ज्ञान के लिये पधारें'** इस लक्ष्य से आमंत्रित किया। पूरे दिन साहित्य में 50% की छूट रखी गयी और किसी भी प्रकार की दान राशि की अपील और घोषणा मंच से नहीं की गई।

इसप्रकार 49वाँ शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर अत्यंत हर्षोल्लासपूर्वक संपन्न हुआ। ●

50वाँ स्वर्ण जयन्ती प्रशिक्षण शिविर विदिशा में

टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा प्रतिवर्ष देश के विभिन्न भागों में संचालित होने वाले प्रशिक्षण शिविरों की शृंखला 50वाँ प्रशिक्षण शिविर अगले वर्ष विदिशा (म.प्र.) में आयोजित होगा।

उक्त शिविर के आमंत्रण हेतु विदिशा समाज के एक विशाल प्रतिनिधि मण्डल का आगमन मेरठ में हुआ और उन्होंने विशाल जनसमुदाय की उपस्थिति में गाजे-बाजे एवं सूखे मेवों से सजे अनेक थालों के साथ सभामंडप में प्रवेश किया, जहाँ युवा फैडरेशन मेरठ के सभी सदस्यों ने उनकी अगवानी की।

खचाखच भरे सभामंडप में विदिशा के प्रतिनिधिमंडल ने आगामी शिविर हेतु आमंत्रण पत्रिका डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के समक्ष प्रस्तुत की और उन्होंने सहर्ष अपनी स्वीकृति प्रदान की। इसके पश्चात् मेरठ फैडरेशन के प्रतिनिधियों ने 42'' का सप्तधातु से निर्मित धर्मध्वज भारी करतल ध्वनि के बीच विदिशा से आये प्रतिनिधिमंडल को सौंपा और विदिशा की ओर से पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल ने उसे स्वीकार किया।

इस अवसर पर ब्र. सुमतप्रकाशजी ने बालकों में धार्मिक संस्कार देने में इन शिविरों के महत्वपूर्ण योगदान की चर्चा की और कहा कि यह कार्य निरंतर चलते रहना चाहिए।

उक्त धर्मध्वजा लेकर विदिशा का प्रतिनिधिमंडल जब विदिशा पहुंचा तो रेलवे स्टेशन पर उनकी भव्य अगवानी हुई।

वेदी प्रतिष्ठा संपन्न

लोनावाला (महा.) : मुम्बई-पूना हाइवे पर स्थित लोनावाला में श्री महावीर कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंडल ट्रस्ट के तत्त्वावधान में श्री महावीर स्वामी दिगम्बर जिनमंदिर में दिनांक 29 से 31 मई तक वेदी प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न हुआ।

इस अवसर पर पण्डित सुनीलजी शास्त्री राजकोट एवं पण्डित हितेशभाई चौवटिया के प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त जामनगर के वाधर परिवार द्वारा क्रमबद्धपर्याय नाटक का मंचन भी हुआ।

कार्यक्रम में याग मंडल विधान व श्री महावीर पंचकल्याणक विधान का आयोजन किया गया। महोत्सव में मुम्बई आदि स्थानों से लगभग 1200 साधर्मियों ने धर्मलाभ लिया।

कार्यक्रम के अन्तिम दिन वेदीशुद्धिपूर्वक श्री महावीर स्वामी की पाषण की मनोज्ञ प्रतिमा गरजतो ज्ञायक परिवार मुम्बई के सदस्यों द्वारा विराजमान की गई।

विधि-विधान के समस्त कार्य ब्र. अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री खनियांधाना के निर्देशन में पण्डित सुनीलजी-अनिलजी-दीपकजी धवल भोपाल के सहयोग से संपन्न हुये। संपूर्ण कार्यक्रम का संचालन पण्डित विरागजी शास्त्री द्वारा किया गया।

पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव संपन्न

मुम्बई : यहाँ विलेपार्ले (वेस्ट) में नवनिर्मित श्री सीमन्धरस्वामी दिगम्बर जिनमंदिर में विराजमान होने वाले वीतरागी जिनबिम्बों की प्राणप्रतिष्ठा श्री कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल ट्रस्ट मुम्बई के तत्त्वावधान में हुई। इस अवसर पर **श्री 1008 शान्तिनाथ दिग. जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव** दिनाँक 17 से 22 मई तक अनेक विशिष्ट कार्यक्रमों एवं आशातीत उपलब्धियों सहित सानन्द सम्पन्न हुआ। देश-विदेश से लगभग 20 हजार साधर्मियों ने कार्यक्रम का लाभ लिया।

इस महोत्सव में आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के सी.डी. प्रवचनों व बहिनश्री के वीडियो तत्त्वचर्चा के अतिरिक्त अन्तरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित वीरेन्द्रजी आगरा, ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना, पण्डित देवेन्द्रजी मंगलायतन, पण्डित अनिलजी शास्त्री भिण्ड, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, पण्डित चेतनभाई राजकोट, पण्डित प्रकाशभाई कोलकाता, पण्डित अश्विनभाई मुम्बई, पण्डित शैलेषभाई तलोद, पण्डित अतुलभाई आदि अनेक विद्वानों के प्रवचनों के अतिरिक्त शताधिक विद्वानों का सानिध्य मिला।

पञ्चकल्याणक की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा-विधि के प्रतिष्ठाचार्य ब्र. हेमन्तभाई गांधी सोनगढ एवं सह-प्रतिष्ठाचार्य श्री सुभाषभाई शेठ बांकानेर थे। संपूर्ण प्रतिष्ठा विधि पण्डित मनीषजी शास्त्री पिड़ावा, पण्डित ऋषभजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, पण्डित सुनीलजी धवल, पण्डित अनिलजी धवल, पण्डित श्रेणिकजी जबलपुर, पण्डित दीपकजी धवल भोपाल के सहयोग से शुद्ध तेरापंथ आम्नायानुसार संपन्न हुई। कार्यक्रम के अन्तिम दिन ब्र. ब्रजलालजी शाह बढवानवाले भी पधारे, जिनके उद्बोधन एवं मान्त्रिक क्रियाओं का लाभ प्राप्त हुआ।

संपूर्ण कार्यक्रम का निर्देशन पण्डित रजनीभाई दोशी हिम्मतनगर एवं मंच संचालन, इन्द्रसभा-राजसभा आदि कार्यक्रमों का संयोजन पण्डित संजयजी शास्त्री मंगलायतन ने रोचकतापूर्वक किया। इसी अवसर पर बढवान भजन मंडली व मलाड भजन मंडली का भी विशेष सहयोग रहा।

बालक शान्तिकुमार के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती चन्द्राबेन-मधुभाई शाह को प्राप्त हुआ। महोत्सव के सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी श्री नेमिषभाई-रेखाबेन शाह मुम्बई, ईशान इन्द्र श्री राजेशभाई जवेरी अहमदाबाद एवं महायज्ञनायक श्री अनंतभाई शेठ मुम्बई थे।

इस पंचकल्याणक की मुख्य विशेषता यह रही कि महोत्सव के दौरान गुरुदेवश्री के प्रवचन, उनकी जीवन गाथा दर्शक फिल्मों का प्रसारण, बहिनश्री की तत्त्वचर्चा, माननीय प्रवचनकारों द्वारा शास्त्र स्वाध्याय, जिनेन्द्र-भक्ति और जैनधर्म के पावन सन्देशों को अत्याधुनिक

टेक्नोलॉजी द्वारा अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाया गया। इस महोत्सव का लाईव प्रसारण इन्टरनेट पर भी किया गया, जिसे देश के लाखों लोगों ने देखा। महोत्सव के दौरान गुरुदेवश्री के जीवनप्रसंगों को प्रदर्शित करती हुई एक भव्य आर्ट गैलेरी का आयोजन किया गया, जिसमें देश-विदेश के प्रख्यात चित्रकारों और शिल्पकारों द्वारा निर्मित चित्रपटों एवं शिल्पकृतियों को प्रदर्शित किया गया। ●

शिकागो व डलास (अमेरिका) में अभूतपूर्व धर्मप्रभावना

(1) शिकागो : यहाँ दिनांक 2 से 8 जून तक डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा प्रतिदिन तत्त्वार्थसूत्र के आधार से चतुर्गति के दुखों का स्वरूप बताते हुए मोक्ष प्राप्ति के उपाय पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। दिनांक 7 जून को विशेष रूप से पण्डित राजमलजी पवैया द्वारा रचित बृहत् शान्तिविधान का भव्य आयोजन किया गया।

(2) डलास : यहाँ जैन सोसायटी ऑफ नॉर्थ टेक्सास द्वारा दिनांक 8-15 जून तक डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के विशेष आध्यात्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। इस अवसर पर प्रात: ग्रन्थाधिराज समयसार की गाथा 49 पर एवं सायंकाल तत्त्वार्थसूत्र के 5वें अध्याय पर मार्मिक प्रवचन हुये।

दिनांक 13 व 14 जून को विशेष शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें तत्त्वार्थसूत्र के छठे अध्याय के आधार से विविध कर्मों के आस्रवों के कारण, पांचवाँ, छठा व सातवाँ गुणस्थान, नयपद्धति, चार अनुयोग आदि विषयों पर 2 दिनों में लगभग 14 घंटे तत्त्वज्ञान की धारा बही।

समस्त कार्यक्रमों में शताधिक लोगों ने धर्मलाभ लिया। कार्यक्रम का संयोजन व संचालन श्री अतुलभाई खारा ने किया।

दशलक्षण हेतु अपनी स्वीकृति तत्काल भेजें

टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा दशलक्षण पर्व पर प्रवचनार्थ जाने वाले विद्वानों से अनुरोध है कि यदि उन्होंने अपनी स्वीकृति अभी तक नहीं भेजी है तो तत्काल जयपुर कार्यालय को पत्र/फोन/ई-मेल द्वारा भेजें।

यद्यपि सभी विद्वानों को जयपुर कार्यालय से अनुरोध पत्र भेजे गए हैं, परन्तु यदि डाक की गड़बड़ी से समय पर न मिले हो तो भी अपनी स्वीकृति हमें शीघ्र नोट करा देवें। **– मंत्री**

स्वीकृति भेजने का पता – **दशलक्षण पर्व व्यवस्था विभाग,**
ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.) 302015
फोन नं.-0141-2705581, 2707458,
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

पंचकल्याणक महोत्सव की दिखी झलक

49वें प्रशिक्षण शिविर 'ज्ञान महोत्सव' के नाम से अद्‌भुत आयोजन के रूप में दर्ज हो गया।

इस ज्ञान महोत्सव में आयोजकों द्वारा पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के कुछ विशिष्ट दृश्य दिखाये गये, जिसमें गर्भ कल्याणक के माता-देवी की चर्चा, पंचकल्याणक की इन्द्रसभा और पालना झूलन, तपकल्याणक के लौकान्तिक देवों की अनुमोदना, ज्ञानकल्याणक का दिव्यध्वनि प्रमाण आदि अनेक दृश्यों को विशाल पाण्डाल के भव्य स्टेज पर अत्यन्त सुन्दरता के साथ प्रस्तुत किया गया, जिन्हें देखने पूरा मेरठ शहर उमड़ पड़ता था। इन कार्यक्रमों की प्रस्तुति को फैडरेशन मेरठ के उत्साही कार्यकर्ताओं के साथ पण्डित अभयकुमारजी देवलाली के निर्देशन में ऋषभजी शास्त्री उस्मानपुर के सहयोग से प्रस्तुत किया गया।

'जैनदर्शन का मूल आधार सर्वज्ञता' विषय पर गोष्ठी संपन्न

मेरठ : यहाँ दिनांक 1 जून को अ.भा. दि. जैन विद्वत्परिषद एवं टोडरमल स्नातक परिषद के संयुक्त तत्त्वावधान में जैनदर्शन का मूल आधार सर्वज्ञता विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता विद्वत्परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने की।

सर्वप्रथम मंगलाचरण पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर द्वारा किया गया। डॉ. नेमचंदजी खतौली, डॉ. मनीषजी जैन खतौली, डॉ. पी.सी. रांवका जयपुर, डॉ. राजेन्द्रकुमारजी बंसल अमलाई तथा पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली ने सर्वज्ञता के स्वरूप एवं विभिन्न दर्शनों में सर्वज्ञता की अवधारणा विषय पर अपने विचार प्रस्तुत किये।

अन्त में डॉ. भारिल्ल ने सर्वज्ञता की विस्तृत मीमांसा की। गोष्ठी का संचालन महामंत्री अखिलजी बंसल ने एवं आभार प्रदर्शन पण्डित शांतिकुमारजी पाटील ने किया।

श्रुतपंचमी पर विचार गोष्ठी

जयपुर (राज.) : यहाँ राजस्थान जैन साहित्य परिषद् की ओर से दिनांक 20 से 22 मई तक तीन दिवसीय कार्यक्रमों का आयोजन हुआ।

दिनांक 20 मई को सायंकाल एवरेस्ट कॉलोनी दिगम्बर जैन मंदिर में **'जैनधर्म दर्शन और संस्कृति-वर्तमान संदर्भ में'** विषय पर विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें डॉ. कलानाथजी शास्त्री एवं डॉ. संजीवजी गोधा ने मुख्य वक्ता के रूप में अपने मार्मिक विचार व्यक्त किये।

इस अवसर पर डॉ. प्रेमचंदजी रांवका एवं श्री विनयजी पापड़ीवाल के उद्‌बोधन का भी लाभ मिला। परिषद के अध्यक्ष श्री नवीनजी बज ने अतिथियों का परिचय दिया तथा अन्त में आभार प्रदर्शन श्री महेशजी चांदवाड़ ने किया। गोष्ठी के संयोजक श्री एस.एल.गंगवाल थे।

बाल शिक्षण शिविर संपन्न

भिण्ड (म.प्र.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान उज्जैन, श्री कुन्दकुन्द स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट एवं अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन शाखा देवनगर के संयुक्त तत्त्वावधान में ग्यारहवाँ सामूहिक जैन बाल संस्कार शिक्षण शिविर ब्र.रवीन्द्रजी 'आत्मन' की प्रेरणा एवं ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना के सानिध्य में दिनांक 7 से 16 मई तक आयोजित किया गया।

यह शिविर म.प्र. के भिण्ड, ग्वालियर, मुरैना, शिवपुरी, टीकमगढ, गुना, नरसिंहपुर, सागर जिलों में तथा उ.प्र. के इटावा, औरया, मैनपुरी, फिरोजाबाद, झाँसी, ललितपुर आदि 14 जिलों के विभिन्न 72 स्थानों पर एक साथ आयोजित किया गया।

इस शिविर में श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जयपुर से 91, श्री अकलंक शिक्षण संस्थान बांसवाड़ा से 6, आचार्य धरसेन जैन सिद्धांत महाविद्यालय कोटा से 36, आत्मार्थी कन्या विद्या निकेतन दिल्ली से 1, ब्रह्मचारी, विदुषी बहिनें व स्वाध्यायी विद्वान 9, भूतपूर्व शास्त्री 2 एवं स्थानीय विद्वान 49-इसप्रकार कुल 194 विद्वानों का सहयोग प्राप्त हुआ।

शिविर का उद्घाटन दिनांक 5 मई को एवं सामूहिक समापन दिनांक 16 मई को श्री सीमंधर जिनालय देवनगर में किया गया।

इस शिविर के आयोजन हेतु मुख्य रूप से ऐसे ग्रामीण स्थानों का चयन किया गया था, जहाँ कोई विद्वान नहीं पहुँच पाता है। इस शिविर में सभी वर्गों के हिसाब से पाठ्यक्रम तैयार किया गया था। शिविर में कक्षा अनुसार पाठ्यक्रम के आधार से सभी जगह कक्षायें चलीं व सभी शिविर स्थानों पर प्रतिदिन प्रात: सामूहिक पूजन, शिविर कक्षायें, दोपहर में सामूहिक कक्षा, सायंकाल शिविर कक्षा, भक्ति, प्रौढ कक्षा, प्रवचन व सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि कार्यक्रमों के माध्यम से तत्त्वप्रचार हुआ।

शिविर के निरीक्षण के लिये शिविर संयोजक व शास्त्री विद्वत्परिषद भिण्ड के 15 विद्वानों की 5 निरीक्षण टीम बनाई गई। टीम के सदस्यों ने सभी जगह पहुँचकर रिपोर्ट तैयार की एवं आवश्यक दिशानिर्देश दिये। शिविर के माध्यम से लगभग 8700 बच्चों ने तथा 2300 साधर्मियों ने तत्त्वज्ञान का लाभ लिया।

शिविर के निर्देशक पण्डित अनिलजी शास्त्री भिण्ड, प्रमुख संयोजक पुष्पेन्द्रजी जैन एवं संयोजक पण्डित अंकुरजी शास्त्री मैनपुरी, पण्डित ऋषभजी शास्त्री भिण्ड, पण्डित वैभवजी शास्त्री भिण्ड व पण्डित अनुभवजी शास्त्री भिण्ड थे। **– पुष्पेन्द्र जैन**

उत्साह के साथ मनाया संकल्प दिवस

दिनांक 25 मई को डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल का जन्मदिवस जिसे स्नातक परिषद संकल्प दिवस के रूप में मनाती है, प्रात:काल जैसे ही डॉ. भारिल्ल पाण्डाल में आये शताधिक स्नातक विद्वानों सहित पूरी सभा ने खड़े होकर करतल ध्वनि के साथ उनका अभिनन्दन किया और उसके पश्चात सभी स्नातक विद्वानों ने मंच पर उपस्थित होकर आजीवन तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार का संकल्प डॉ. भारिल्ल के समक्ष लिया। इस दृश्य को देखकर पूरी सभा भावविभोर हो गई।

टोडरमल स्नातक परिषद का अधिवेशन संपन्न

मेरठ : यहाँ जैन बोर्डिंग हाउस में आयोजित 49वें प्रशिक्षण शिविर के अवसर पर दिनांक 25 मई को सायंकाल टोडरमल स्नातक परिषद का अधिवेशन संपन्न हुआ।

इस अवसर पर उपस्थित स्नातक विद्वानों ने उनके जीवन में टोडरमल सिद्धांत महाविद्यालय द्वारा प्राप्त शिक्षा की उपयोगिता और उससे जीवन में होने वाले लाभ के संदर्भ में अपने विचार प्रस्तुत किये, जिससे पूरा सदन प्रभावित हुआ और अनेक विद्यार्थियों ने महाविद्यालय में प्रवेश प्राप्त कर जैनदर्शन शास्त्री बनने की प्रेरणा प्राप्त की।

पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली की अध्यक्षता में आयोजित इस समारोह में श्री राजकुमारजी जैन सहारनपुर मुख्य अतिथि एवं श्री जे.डी. जैन मेरठ सहित अनेक विशिष्ट महानुभाव व डॉ. भारिल्ल सहित अनेक विद्वत्गण मंचासीन थे।

कार्यक्रम का संचालन पण्डित शांतिकुमारजी पाटील ने किया।

(पृष्ठ 22 का शेष ...)

सम्यक्‌तप तपकर अर्थात् आत्मा का सच्चाज्ञान करके अनशनादि के शुभविकल्प रहित स्वरूप में ठहर जाना, स्वरूप में प्रतपन – देदीप्यमान होना वह तप है। आत्मा के भान बिना अनशनादि का फल आत्मा के लाभ के लिए नहीं है, वह तो शरीर का शोषण करना मात्र है। अतः हे स्ववश मुनि! चिदानन्द अनुभव स्वरूप आत्मा में एकाग्रता कर तो लाभ है, मात्र अनशनादि करने से – बाह्य शरीर सुखाने से तो लाभ है नहीं।

वीतरागी आत्मस्वभाव में एकाग्र होनेवाले को सम्यक् तपस्वी कहते हैं, वही देदीप्यमान मुक्तिस्त्री को प्राप्त करता है। देदीप्यमान अर्थात् रूपवाली। लोग तो सुरूपवान स्त्री के कामी होते हैं, किन्तु मुनिराज कहते हैं कि वास्तविक रूपवान अर्थात् देदीप्यमान तो मुक्तिरूपी ही है – मुक्तदशा ही है। सच्चा तपस्वी मुक्तिरूपी शाश्वत स्त्री को पाता है, शेष सभी तो स्वर्ग-नरक में भटकते ही रहते हैं।

प्रश्न – अनशन में आहार तो छोड़े न?

उत्तर – भाई ! आहार, पर-जड़पदार्थ को छोड़े-त्यागे कौन ? वास्तव में तो आत्मा राग भी नहीं छोड़ता, राग को छोड़ने से राग छूटता नहीं, परन्तु रागरहित ज्ञानानन्द वीतरागी आत्मस्वभाव का भान करके उसमें एकाग्र होनेपर राग सहज ही छूट जाता है। स्वभाव में लीन होने पर राग टल जाता है, राग को टालना-छोड़ना नहीं पड़ता। वीतरागमार्ग के अतिरिक्त कहीं अन्यत्र ऐसा मोक्ष का मार्ग नहीं होता।●

श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा

ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में

38वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर

(रविवार, दिनांक 2 अगस्त से मंगलवार 11 अगस्त, 2015 तक)

शिविर में तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल एवं अन्य अनेक विद्वानों के प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ प्राप्त होगा।

शिविर में जयपुर आने हेतु अपने टिकिट शीघ्र करा लेवें। कृपया आवास आदि की समुचित व्यवस्था हेतु अपने पधारने की पूर्व सूचना जयपुर कार्यालय को अवश्य भेजें।

शिविर में पधारने हेतु आप सभी सादर आमंत्रित हैं।

विद्वत्परिषद की बैठक संपन्न

मेरठ (उ.प्र.) : दिनांक 2 जून को विद्वत्परिषद की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल की अध्यक्षता में संपन्न हुई। सर्वप्रथम डॉ. पी.सी. रांवका द्वारा मंगलाचरण किया गया तथा महामंत्री अखिल बंसल ने गत बैठक की कार्यवाही पढकर सुनाई, जिसका सभी ने अनुमोदन किया। बैठक में विद्यमान विभिन्न बिन्दुओं पर चर्चा की गई, जिसमें यह निर्णय लिया गया कि विद्वत्परिषद के चुनाव अक्टूबर में जयपुर में कराये जायें उसके पूर्व कार्यवाही हेतु दिनांक 10 अगस्त को जयपुर में कार्यकारिणी की बैठक रखने पर सहमति प्रदान की गई। ब्र. यशपाल जैन को चुनाव अधिकारी नियुक्त किया गया।

शोक समाचार

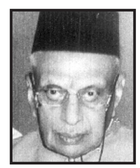

दिल्ली निवासी श्री अजितप्रसादजी जैन (पीतल वाले) का दिनांक 23 मई 2015 को शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में वीतराग-विज्ञान एवं जैनपथप्रदर्शक हेतु 1100-1100/- रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मा चतुर्गति के दुःखों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हो – यही मंगल भावना है।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो – वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें –
वेबसाईट – www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com

मुक्त विद्यापीठ के छात्रों हेतु सूचना

श्री टोडरमल जैन मुक्त विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड, ए-4, बापूनगर, जयपुर-302015 (राज.) के **प्रथम सेमेस्टर की परीक्षायें जून 2015 के अंतिम सप्ताह में होने जा रही है।** परीक्षा के एक सप्ताह पूर्व (लगभग 25 जून तक) सभी परीक्षार्थियों को एनरोलमेंट नम्बर व प्रश्नपत्र भेज दिए जावेंगे। जिन परीक्षार्थियों ने अभी भी परीक्षा की तैयारी शुरु नहीं की है, वे शीघ्र तैयारी में जुट जावें।

परीक्षा कार्यक्रम निम्नानुसार है –

परीक्षा कार्यक्रम एवं पाठ्यक्रम

द्विवर्षीय विशारद परीक्षा (प्रथम सेमेस्टर)

प्रथम वर्ष (उपाध्याय कनिष्ठ)

1. प्रथम प्रश्नपत्र : वीतराग विज्ञान पाठमाला भाग-1

2. द्वितीय प्रश्नपत्र : छहढाला (70 अंक)+सत्य की खोज (30 अंक)

द्वितीय वर्ष (उपाध्याय वरिष्ठ)

1. प्रथम प्रश्नपत्र : तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग-1

2. द्वितीय प्रश्नपत्र : लघु जैन सिद्धांत प्रवेशिका

त्रिवर्षीय सिद्धांत विशारद परीक्षा (प्रथम सेमेस्टर)

प्रथम वर्ष –

1. प्रथम प्रश्नपत्र : गुणस्थान विवेचन

2. द्वितीय प्रश्नपत्र : क्रमबद्धपर्याय (70 अंक) + सामान्य श्रावकाचार (30 अंक)

द्वितीय वर्ष –

1. प्रथम प्रश्नपत्र : समयसार-पूर्वरंग और जीवाजीवाधिकार

2. द्वितीय प्रश्नपत्र : गोम्मटसार कर्मकाण्ड -प्रथम अध्याय

तृतीय वर्ष –

1. प्रथम प्रश्नपत्र : समयसार-कर्ताकर्माधिकार

2. द्वितीय प्रश्नपत्र : गोम्मटसार जीवकाण्ड-गाथा 70 से 215 तक (97 से 112 गाथा छोड़कर)

ध्यान रहे :– परीक्षा बोर्ड कार्यालय से जानकारी चाहने हेतु परीक्षार्थी अपना एनरोलमेंट नम्बर का उल्लेख अवश्य करें; ताकि आपके द्वारा चाही गई जानकारी शीघ्र मिल सके।

– ओ.पी.आचार्य (प्रबंधक)

R.N.I. No. 38278/83 ***Postal Regd. No. JaipurCity/421/2015-17***

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन में बाहरी प्लास्टर का दृश्य

ढाईद्वीप जिनायतन, इन्दौर
बढ़ते चरण...

सम्पादक :
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी.
सह-सम्पादक :
डॉ. संजीवकुमार गोधा
एम.ए.द्वय , नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी.
प्रकाशक एवं मुद्रक :
ब्र. यशपाल जैन, एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**